समान नागरिक संहिता और नारीवाद

डॉ पिंकी पुनिया एवम डॉ ऋतेष भारद्वाज

हमारे देश में महिलाओं के अधिकारों से संबंधित शायद ही कोई दूसरा मुद्दा इतने दबावों का शिकार रहा होगा जितना कि विभिन्न धार्मिक समुदायों में निजी कानूनों में सुधारों का मुद्दा। समाज का पितृसत्तात्मक आधार ही निजी कानूनों को जीवित रखने का सबसे महत्वपूर्ण कारण रहा है क्योंकि पूरे मामलों को धार्मिक मान्यता के साथ उलझा देने के बाद इस सवाल पर खुली बहस के दौरान कई चुनौतियां देखने को मिलती है। निजी कानूनों में सुधार अथवा समान नागरिक संहिता की रूपरेखा निर्धारित करने के संदर्भ मेंए महिला आंदोलन के बाहर उठने वाली बहस सदा ही श्अल्पसंख्यक बनाम बहुसंख्यकश् पहचान और राष्ट्रीय एकीकरण जैसी दलीलों के आसपास घूमती दिखाई देती है क्योंकि सभी निजी कानून संबंधित धर्मों से वैधता प्राप्त करते हैं इसमें किसी भी समुदाय के निजी कानून में जबरन किए जाने वाले किसी भी सुधार या बदलाव को वह समुदाय अपनी पहचान के लिए खतरे के रूप में देखता है। वहीं दूसरी ओरए समान कानूनों की आवश्यकता को राष्ट्रीय एकीकरण के लिए आवश्यकता के रूप में देखा जा रहा हैं।

समान नागरिक संहिता पूरे देश के लिए एक समान कानून के साथ ही सभी धार्मिक समुदायों के लिए विवाहए तलाकए विरासतए गोद लेना इत्यादि कानूनों में भी एकरूपता प्रदान करने का प्रावधान करती है। भारतीय संविधान के नीतिनिर्देशक तत्व के अनुच्छेद 44 में वर्णित है कि राज्य भारत के पूरे क्षेत्र में नागरिकों के लिए एक समान नागरिक संहिता सुनिश्चित करने का प्रयास करेगा। आज अधिकांश भारतीय कानूनए इन मामलों में एक समान नागरिक संहिता का पालन करते हैं जैसे संपत्ति हस्तांतरण अधिनियमए भारतीय अनुबंध अधिनियमए नागरिक प्रक्रिया संहिताए भागीदारी अधिनियमए साक्ष्य अधिनियम इत्यादि। कई राज्यों ने कई कानूनों में संशोधन किए हैं परंतु निजी कानूनों में अभी भी मौलिक अधिकारों से अंतर्विरोध दिखाई देता है।

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि भारतीय नागरिकों के लिए एक समान नागरिक संहिता का प्रावधान है लेकिन उत्तराधिकारए विवाहए तलाक और बच्चों के संरक्षण वह गोद लेने के मामलों में विभिन्न धर्मों पर आधारित अलग.अलग कानून आज भी मौजूद है। इन निजी कानूनों के माध्यम से महिलाओं के साथ उन सभी मामलों में भेदभाव होता है जिसका जिक्र संविधान के मूल अधिकारों वाले अध्याय ;भाग 3द्ध में किया गया है। संविधान राज्यों से यह आग्रह करता है ;अनुच्छेद 44 नीति निर्देशक तत्वद्ध कि वह समान नागरिक संहिता बनाने की कोशिश करें ताकि निजी कानूनों की पृष्ठभूमि में मौजूद असमानताए शोषणए मौलिक अधिकारों के उल्लंघन को रोका जा सके। स्वतंत्रता के इतने वर्षों के पश्चात भी जनसंख्या का एक बड़ा वर्ग अपने मूलभूत अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहा है। इस प्रकार समान नागरिक संहिता का लागू ना होना एक प्रकार से विधि के शासनए संबंध संविधान की प्रस्तावना और मौलिक अधिकारों का उल्लंघन है।

सन 1772 में वारेन हेस्टिंग्स के द्वारा जारी अधिनियम के माध्यम से भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा स्थापित किए जाने वाले न्यायालयों की नींव रखी गई। इसके अनुसार यह कहा गया कि कुछ खास मामलों में हिंदू और मुस्लिम अपने.अपने कानूनों द्वारा शासित होंगे। हिंदुओं के मामले में श्शास्त्रोश् पर आधारित कानून और मुसलमानों के मामले में श्कदीश् द्वारा की गई व्याख्या को ब्रिटिश शासकों ने सही माना। दूसरे शब्दों मेंए धार्मिक स्वतंत्रता के नाम पर समर्थित श्निजी कानूनश् बीसवीं शताब्दी की रचना है। 1955 में हिंदू कोड ने श्हिंदूश् अस्मिता को जमाने की प्रक्रिया को पूरा किया जिसकी शुरुआत 19वीं शताब्दी में हुई थी। इसके तहत उन सभी को जो मुस्लिमए ईसाई और पारसी नहीं थे उन्हें बतौर हिंदू घोषित किया गया। इसी प्रकार 1937 के शरीयत कानून में मुस्लिम समुदाय की सीमाएं निर्धारित की गई जबकि पहले प्रचलित रिवाजों का ही ज्यादातर अनुसरण किया जाता था।

ब्रिटिश शासन के अंत में निजी मुद्दों से निपटने वाले कानूनों की संख्या में वृद्धि के कारण सरकार ने वर्ष 1941 में हिंदू कानून को संहिताबंद्ध करने के लिए बीण् एनण् राव के अध्यक्षता में एक समिति गठित की। इसकी सिफारिशों के आधार पर हिंदुओंए बौद्धए जैन और सिखों के लिए वसीयतए उत्तराधिकार से संबंधित कानून को संहिताबद्ध करने के लिए वर्ष 1956 में हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के रूप में एक विधेयक को अपनाया गया। वही साथ हीए मुस्लिमए ईसाई और पारसी लोगों के अपने अलग.अलग निजी कानूनों का प्रावधान था।

भारत में महिलाओं की स्थिति पर कमेटी की रिपोर्ट ;ब्वउठपजजमम वद ैजंजने व िंॅवउमद पद प्दकपंद्ध ने 1974 में समान नागरिक संहिता की आवश्यकता की सिफारिश की थी और इससे पहलेए 1971 में पुणे में मुस्लिम महिला सम्मेलन में भी समान नागरिक संहिता की आवश्यकता को उठाया गया था। भारत में महिला आंदोलन के

आगे बढ़ने के क्रम मेंए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहला महिला सम्मेलन वर्ष 1975 में मेक्सिको में आयोजित किया गया और इसी दौरान 1975.85 ;अंतर्राष्ट्रीय महिला दशकद्ध के दौरान अनेक महिला संगठन भी अस्तित्व में आए। इस दौरान अलग.अलग महिलाओं का एकसाथ काम करने के पश्चात उनके जीवन के अनेक अदृश्य तथ्य भी उभर कर इनके सामने आने लगे। इससे महिलाओं ने अपने दिन.प्रतिदिन के जीवन में घटित हो रही हिंसा को उजागर कर दियाए जिस पर अब तक किसी का ध्यान नहीं गया था। महिलाएं इस उत्पीड़क परिवेश में जीने के लिए इसलिए भी मजबूर थी क्योंकि परिवार में उनकी स्थिति दोयम दर्जे की थी और उनके पास कोई दूसरा विकल्प भी उपलब्ध नहीं था।

महिलाओं के अनुभवों ने स्पष्ट किया कि संपत्ति के अधिकारोंए उत्तराधिकार से संबंधित अधिकार और मायके की संपत्ति पर अधिकारों के अभाव ने महिलाओं की स्थिति बेहद कमजोर कर दी है और यह उत्पीड़न और असमानता सारे समुदायों में समान रूप से व्याप्त थी। आज लता मित्तलए मैरी रॉयए शाहबानोए शहनाज शेखए सरला मुदगलए शबनम हाशमीए शायरा बानोए आफरीन रहमानए गुलशन परवीनए इशरत जहां और अतिया साबरी व अन्य ऐसे ही कई नाम भेदभावपूर्ण निजी कानूनों के खिलाफ संघर्ष का प्रतीक बन चुके हैं। नारीवादी आंदोलन के भीतर अपने संघर्षों को मजबूती देने के साथ.साथ इस बात पर भी गौर किया गया कि ऐसे कानूनी सुधारों की भी मांग उठाई जाए जो महिलाओं को लाभ पहुंचाएं। इस जरूरत पर भी इस दौरान बल दिया गया की महिला अधिकारों को अल्पसंख्यक.बहुसंख्यक के नजरिए से नहीं बल्कि महिलाओं की समानता के अधिकार और न्याय के दृष्टिकोण से देखा जाना चाहिए। समुदायिक अधिकारों के नाम पर उनके व्यक्तिगत अधिकारों को ना दबाया जाए। इसके साथ हीए ऐसे कई व्यक्तिगत और सामूहिक संघर्षों की तरफ ध्यान आकर्षित किया गया जहां पर विवाद का मुख्य कारण उत्तराधिकारए परिवारिक संपत्ति में हिस्साए गुजारा भत्ता और साझा संपत्ति संसाधनों पर नियंत्रण व पैतृक मकान में अधिकार जैसे सवालों को लेकर था। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि निजी कानूनए निजी बनाम सार्वजनिक क्षेत्र ;च्नइसपब टे च्तपअंजम ैचीमतमद्ध के बीच संपर्क को बाधित करते हैं और वंशक्रमए उत्तराधिकारए अभिभावकता के मामलो में असमान अधिकारों को बनाए रखने और बढ़ावा देने का काम करते हैं और इन्हीं दलीलों के आधार पर सभी महिलाओं के लिए गैर भेदभावपूर्ण समान कानूनों के निर्माण की मांग को महिला आंदोलन द्वारा पूरे जोर.शोर से उठाया गया।

महिला आंदोलन और बुद्धिजीवी समुदाय के भीतर चलने वाली बहसों को 1980 के दशक के बाद एक नई दिशा मिली। इसमें आए बदलाव के कई कारण देखे जा सकते हैंए जैसे एक महत्वपूर्ण कारण संप्रदायिक और कट्टरवादी ताकतों का उभार था जिसके फलस्वरूप अल्पसंख्यक समुदायों में असुरक्षा की भावना बढ़ी है। दूसराए भारत में कानूनी सुधारों के सिलसिले में महिलाओं के अनुभव भी बहुत संतोषजनक नहीं रहे। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय दबाव के चलते

राज्य ने महिलाओं के पक्ष में कई कानून तो बनाए लेकिन महिलाओं के प्रति हिंसा और अपराधों को रोकने में इन कानूनों की विफलता ने सामाजिक सुधारों के मुद्दे पर पुनर्विचार की प्रक्रिया को दोबारा हवा दे दी। देखा जाए तो 1980 के दशक और उसके पश्चात ज्यादातर कानून दहेज उत्पीड़नए दहेज हत्याए बलात्कारए भ्रूणहत्या जैसे मुद्दों पर केंद्रित थे। तीसराए राज्य के साथ महिला आंदोलन के अनुभवों ने भी इस बात को समझ लिया कि उनकी स्थिति सुधारने के लिए संघर्ष में राज्य उनका सहयोगी नहीं हो सकता है।

उपरोक्त कारणों के चलते ही महिला आंदोलन ने कानूनी सुधारों के लिए राज्य से प्रार्थना करने के बजाए अपनी समझ पर नए सिरे से विचार करना प्रारंभ कर दिया और इस बात पर जोर दिया जाने लगा की रणनीति के स्तर परए समान कानूनों की मांग को फिलहाल स्थगित कर दिया जाए और इसके बजाय जेंडर समानता ;ळमदकमत श्रनेजपबमद्ध के लिए दूसरे विकल्पों ;अनिवार्य समान संहिताद्ध पर विचार किया जाए। इन्हीं विकल्पों के संदर्भ में हमें पांच दृष्टिकोण दिखाई देते हैं और इन्हें ही अनिवार्य समान संहिता ;ब्वउचनसेवतल ब्वउउवद ब्वकमद्ध के रूप में देखने की कोशिश की गई।

क आंतरिक सुधार

दिल्ली के एक महिला समूह श्सहेलीश् का मानना था कि हमें एक न्यायपूर्ण और लैंगिक समानता पर आधारित संहिता की मांग करनी चाहिए। हमारा संघर्ष एक ऐसे अनिवार्य समान कोड संहिता के लिए हो जो निजी कानूनों से ऊपर हो। इसी विचार को ध्यान में रखते हुए निजी कानूनों के भीतर सुधार ;इसके अंतर्गत दो मुख्य धूरियां हैद्ध की वकालत की गई जैसे पहली धूरी के रूप में मुंबई का निकाहनामा समूह है जिसने मॉडल श्निकाहनामाश् का मसौदा तैयार किया है जिसे कुछ समय पश्चात मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड द्वारा भी स्वीकार कर लिया गया। मुंबई की ही श्धुमैन रिसर्च एंड एक्शन ग्रुपश् ;ॅत्।ळरू ॅवउमद त्मेमंतबी ंदक ।बजपवद ळतवनचद्ध का मानना है कि समुदाय की महिलाएं वैसे बदलावों के प्रति राय नहीं व्यक्त करना चाहती जो समुदाय के बाहर से आते हैं। वूमेन रिसर्च एंड एक्शन ग्रुप ने एक सर्वेक्षण भी किया था जिसके तहत 15000 महिलाओंए सामाजिक और राजनीतिक कार्यकर्ताओं के साथ.साथ वकीलोंए जजों और धार्मिक नेताओं से भी बातचीत की गई। इन दोनों ही संगठनों का मानना था कि वर्तमान समय में केवल एक ही व्यवहारिक विकल्प है कि छोटे.छोटे परिवर्तनों पर ध्यान केंद्रित किया जाए जिससे महिलाओं को कुछ और अधिकार मिले जाए।

प्रगतिशील निकाहनामा ने कई सुझाव पेश किए थे जैसे.

1 एक से अधिक विवाह की इजाजत में सुधार हो। इसमें पहले वाली पत्नी के लिए तलाक का विकल्प शामिल हो।

2 गुजारा भत्ता और उत्तराधिकार के संबंध में व्यापक और पर्याप्त अधिकार महिलाओं को दिए जाएं।

3 तीन तलाक ;तलाक.ए.बिद्दतद्ध के नियम को गैरकानूनी घोषित करना।

इसी तरह का दृष्टिकोण एक अन्य महिला संगठन जॉइंट वूमेन प्रोग्राम के द्वारा रखा गयाए जिसने ईसाई निजी कानूनों पर एक बिल का मसौदा तैयार किया था। जॉइंट वूमेन प्रोग्राम द्वारा ईसाई निजी कानून में जिन पहलू में सुधार की मांग की गई उसमें.

1 पैदाइशी ईसाईयों और भारतीय ईसाइयों में अंतर की बात कही गई।

2 अभिभावकों की उपस्थिति में ही नाबालिगों की शादी का प्रावधान हो

3 तलाक के बाद महिलाओं के लिए गुजारे भत्ते के अधिकार का समर्थन इत्यादि।

दूसरे धुरी के अंतर्गतए आंतरिक सुधार की आवाज इम्तियाज अहमद जैसे विचारको द्वारा दिए गए विश्लेषण में मिलती है जिन्होंने मुस्लिम समुदायों के जनवादी मत को इकट्ठा करने में अपनी भूमिका निभाई है। इम्तियाज अहमद का मानना था कि किसी भी तरह के समान संहिता को लागू करने में कुछ समस्याएं हैं जैसे पहलाए यह स्पष्ट नहीं है कि इस तरह की संहिता की परिधि क्या होगीघ् क्या यह केवल हिंदू अविभाजित परिवार के भेदभावपूर्ण प्रवाधानों समेत सभी पहलुओं को शामिल करेगाघ् तीसरा मौजूदा कानून कम.से.कम चार विशेष धर्मशास्त्र संबंधी दर्शन पर आधारित हैद्दएंग्लिकनए हिंदूए मुस्लिम और जनजाति । इन सभी दर्शनों को एकजुट करने का आधार अभी तक नहीं खोजा जा सका है। इसी के साथ अहमद यह भी कहते हैं कि कुछ समुदायों जैसे नागाए मिजो इत्यादि जनजातियों को भी संवैधानिक सुरक्षा मिली हुई है इसलिए समान नागरिक संहिता को लागू करने के लिए संविधान में संशोधन की आवश्यकता होगी। इम्तियाज का मानना था कि समुदायों के लिए सही रणनीति यही है कि वह अपने

निजी कानूनों के उन हिस्सों को तर्कसंगत व प्रमाणिक बनाएं जिनका संविधान द्वारा प्रदत्त समानता के प्रावधानों से टकराव है या जो न्याय और नैतिकता की जांच पर खरे न उतरते हो।

ख **लैंगिक न्याय पर आधारित वैकल्पिक कोड**

निजी कानूनों के संदर्भ में लैंगिक न्याय पर आधारित वैकल्पिक कोड की भी बात की गई और इसमें ऐसा कहा गया कि सामान्य परिस्थितियों में निजी कानून ही लागू होंगे लेकिन विवाद के समय पर महिलाओं के पास यह विकल्प होगा कि वह संहिता का सहारा ले जो उनके अधिकारों की रक्षा निजी कानूनों की तुलना में अच्छी तरह से करेगा। मुंबई स्थित फोरम अगेंस्ट ऑप्रेशन ऑफ वूमेन ;थ्वतनउ ।हंपदेज व्चचतमेेपवद व िॅवउमदद्ध ने एक ऐसी संहिता तैयार की थी जिस पर उसने अन्य महिला समूहों से भी चर्चा की गई। इस फोरम द्वारा सुझाए गए कुछ प्रस्ताव निम्नलिखित है.

1 कानूनों को यथार्थ रूप से लागू कराने की गारंटी सुरक्षित की जाए।

2 सामाजिक सुरक्षा के लाभों को कानूनी तौर पर सुनिश्चित किया जाए।

3 महिलाओं को कानूनी शिक्षा मुहैया कराना सरकार की जिम्मेदारी हो।

4 परिवार के विचार को व्यापक बनाया जाए और इसमें समलैंगिक संबंधों और विवाह के बिना साथ रहने वाले लोगों को भी शामिल किया जाए।

ग विपरीत विकल्प

विपरीत विकल्प की बात दिल्ली स्थित वर्किंग ग्रुप आन वूमेन्स राइट्स की ओर से पेश की गईए जिसकी उम्मीद थी कि राज्य बनाम समुदाय और समुदाय बनाम महिलाओं को जो ध्रुवीकरण किया गया हैए उसे विपरीत विकल्प के माध्यम से तोड़ा जा सकता है। वर्किंग ग्रुप ने एक समान संहिता की मांग की इस आधार पर आलोचना की कि इसे राष्ट्रीय अखंडता के विचार के लिए ;ना कि लैंगिक न्याय की प्राप्ति के लिएद्ध या तो छोड़ दिया गया है या अपना लिया गया है। दूसरी ओरए निजी कानूनों के अंतर्गत सुधार आंतरिक पितृसत्तात्मक दबावों के कारण रुका पड़ा है। इस वर्किंग ग्रुप के प्रस्ताव के तीन मुख्य हिस्से हैं।

1 एक व्यापक लैंगिक न्याय पर आधारित कानूनों का निर्माण किया जाए और उसका संस्थानीकरण होए इसमें महिलाओं को ना केवल परिवार के भीतर बल्कि कार्यस्थल पर भी महिलाओं के समान अधिकार शामिल होंगे।

2 भारत के सभी नागरिक समान नियमों की संरचना से बंधे होंगे चाहे जन्म के सवाल पर या नागरिकता लेने के सवाल पर। जिन क्षेत्रों में कानून है ही नहींए उन्हें पहचान कर उनके लिए कानून बनवाने और उन कानूनों का मसौदा तय करने का काम किया जाए।

3 सभी नागरिकों के पास निजी कानूनों द्वारा शासित होने के चयन का अधिकार होना चाहिएए इसके साथ ही उनके पास अपने इसे भविष्य में किसी भी तारीख को खारिज करने का विकल्प भी होना चाहिए।

घ निजी कानूनों के दायरे से बाहर के क्षेत्र में कानून निर्माण

निजी कानूनों के दायरे से बाहर के क्षेत्रों में कानून निर्माण पर जोर दिया जाना चाहिए और इसमें मुंबई की श्मजलिसश् और श्अखिल भारतीय जनवादी महिलाश् समिति ने कुछ सुधार की पेशकश की थी। मजलिस का मानना है कि जनता की नजर में समान नागरिक संहिता शब्द इस्लामी रीति.रिवाजों में सुधार का पर्यायवाची बन चुका है। बातचीत के केंद्र में कभी भी विवाह और तलाक के संबंध में महिलाओं के आर्थिक अधिकारों पर चर्चा नहीं होती बल्कि बहुविवाह प्रणाली और तीन तलाक पर चर्चा केंद्रित होती है और इसमें सिर्फ मुस्लिम समुदाय को ही निशाना बनाया जाता है। समान अधिकार और समान नियम के प्रति प्रतिबद्धता पर अडिग रहते हुए 1995 के कन्वेंशन में जनवादी महिला समिति ने कदम.कदम पर बदलाव की वकालत की है जो मजलिस द्वारा सुझाई गए रणनीतियों से मेल खाता है। इनका सुझाव था कि विशेष क्षेत्रों में तत्काल कानून निर्माण करके महिलाओं के लिए सामान कानूनी जमीन मजबूत की जाए जैसे शादी के बाद हासिल की गई संपत्ति में अधिकारए शादियों का पंजीकरण आवश्यक हो चाहे आप किसी भी धर्म को मानने वाले हो और घरेलू हिंसा पर कानून बनाया जाए।

ड जिन मामलों में सभी समुदायों की महिलाएं एक जैसा भेदभाव झेलती है लेकिन उनके पास समान अधिकार नहीं है वहां अनिवार्य समान कानूनों का निर्माण किया जाए।

वास्तव में निजी कानूनों के भेदभावपूर्ण पहलुओं के निराकरण के लिए इन कानूनों में सुधार पर तो सबकी सहमति हैए लेकिन इसके लिए सबके रास्ते अलग.अलग है। समान शब्द के प्रयोग पर भी असहमति हैं। तर्क दिया जाता है कि समरूपताए विभिन्नता और बहुलता के विरुद्ध है इसलिए हो सकता है कि ऐसे में सारे समुदायों पर समान बहुमत वाले कानून थोप दिए जाए। कभी.कभी श्समरूपताश् या श्समानश् के विचार को इसलिए भी खारिज किया जाता है क्योंकि इसके प्रयोग के जरिए ऐसी राय तैयार करने की कोशिश की जाती है जिससे समान नागरिक संहिता से राष्ट्रीय एकीकरण को बल मिलेगा। राष्ट्रीय अखंडता को समान नागरिक संहिता के तर्क के रूप में पेश करने को नारीवादियो ने मंजूर नहीं किया। इसका पहला कारण यह है कि इस तर्क की बुनियाद एक ऐसी सोच पर आधारित है जो यह मानकर चलती है कि अन्य समुदाय विविध और पिछड़े हुए कानूनों में जकड़े हुए हैंए जो राष्ट्रीय अखंडता के लिए खतरनाक है जबकि केवल हिंदुओं ने सुधारों को अपनाया है। सरला मुदगल बनाम भारतीय संघ 1995 के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने यह टिप्पणी की थी किए ष्हिंदुओं के साथ सिखए जैन और बौद्ध ने राष्ट्रीय अखंडता के लिए अपनी भावनाओं का परित्याग किया हैए जबकि अन्य ऐसा नहीं करतेए ष्सर्वोच्च न्यायालय ने आगे कहा किए ष्भारतीय गणराज्य सिर्फ एक ही राष्ट्र होना थाद्दभारतीय राष्ट्र और कोई भी समुदाय या धर्म के आधार पर एक अलग अस्तित्व की दावेदारी नहीं कर सकता था।ष्

यह दलील सही है कि ऐतिहासिक रूप सेए समान कानूनों ने एकीकरण के संदर्भ में कोई लाभ नहीं पहुंचाया है। मिसाल के तौर परए पाकिस्तान और बांग्लादेश में एक इस्लामिक कानून होने से एकीकरण की शक्तियों को कोई मजबूती नहीं मिली। भारत में भीए समान हिंदू कानूनों ने हिंदू धर्म की उच्च और निम्न जातियों तथा भाषाई समूह के एकीकरण में कोई मदद नहीं दी है।